चतुर्थ अध्याय
'अन्ततः' उपन्यास में चित्रित समस्याएँ'

: चतुर्थ अध्याय :

"अन्ततः" उपन्यास में चित्रित समस्याएँ।

उपन्यास का अहम् उद्देश्य जीवन की व्याख्या करना या जीवन दर्शन को अभिव्यक्त करना होता है। आधुनिक हिन्दी उपन्यासकारों ने मानव सम्बन्धों का सुक्ष्म चित्रण कर जीवन के यथार्थ स्वरूप को परिभाषित किया है और साथ ही जीवन से सम्बन्धीत समस्याओं को उजागर किया है। मानव जीवन अनेक समस्याओं से घेरा हुआ है। वर्तमान जीवन में तो ऐसी अनेक समस्याएँ उभरी है जिनको सुलझना बड़ा कठिन काम है। डॉ.देवेश ठाकुर ने वर्तमान महानगरीय जीवन की विभिन्न समस्याओं पर अपनी दृष्टि केंद्रित की है।

समाज में आए हुए परिवर्तन और उसकी प्रक्रिया से निर्माण हुए सामाजिक विघटन के परिणामों के कारण ही विविध सामाजिक समस्याएँ निर्माण होती है। इन सामाजिक समस्याओं का यथार्थ चित्रण देवेशजी ने "अन्ततः" उपन्यास में किया है। प्रस्तुत उपन्यास में सबसे महत्वपूर्ण समस्या स्त्री और पुरूष के पारस्पारिक सम्बन्धों की है। आधुनिक भारतीय समाज में स्थित स्त्री-पुरूष के नये सम्बन्धों का विश्लेषण करना देवेशजी का प्रिय विषय रहा है। उन्होंने यहाँ स्त्री-पुरूष के तेजी से बदलते हुए संदर्भों को महानगरीय परिवेश में प्रस्तुत किया है। प्रमुख रूप से इसमें मध्यवर्गीय शिक्षित नारी की विवशता का चित्रण मिलता है। साथ ही महानगरीय जीवन की अनेक समस्याओं का चित्रण अत्यंत स्पष्ट, सजीव एवं प्रभावशाली ढंग से किया है।

"अन्ततः" उपन्यास में उपन्यासकारने महानगरीय परिवेश में यथार्थ धरातल पर जिन समस्याओं को अंकित किया है उनका विवेचन मैंने निम्नलिखित के अनुसार किया है -

१. नारी समस्या।

२. स्त्री-पुरूष सम्बन्ध।

३. सेक्स की समस्या।

४. असफल प्रेमविवाह।

५. अन्तर्जातीय विवाह की समस्या।

६. अन्तर्द्वन्द्व।

७. संस्कृति एवं परिवेश के प्रति विद्रोह।

८. होटल-क्लब संस्कृति।

९. जीवन-मूल्यों का विघटन।

१०. अकेलेपन की समस्या।

११. अन्धानुकरण।

१२. आर्थिक समस्या।

१३. भ्रष्टाचार।

१४. आवास की समस्या।

१५. जाति श्रेष्ठता की समस्या।

४.१ नारी समस्या :-

युग परिवर्तन के साथ साथ नारी-जीवन सम्बन्धी परम्परागत आदर्शों में तीव्र परिवर्तन आधुनिक युग की विशेषता रही है। इस युग में सुधार आन्दोलनों के कारण नारी को परम्परागत बंधन से मुक्त करने के स्वर भी मुखरित हुए और "परम्परागत ग्राहस्थ एवं पतिव्रत के परिवेश में कुण्ठित नारी उच्चशिक्षा और नारी स्वातंत्र्य के प्रभाव में स्वच्छन्द जीवन की ओर अग्रोसर हुई। परम्परागत अबला ने परिवर्तन के परिवेश में सबला बनकर पुरूष के समक्ष अपने स्वतंत्र अस्तित्व की घोषणा की।"[१] पुरातन काल से नारी समस्या का प्रमुख कारण प्रायः आर्थिक पराधिनता था किन्तु वर्तमानकाल में नारी शिक्षा का प्रचार होने से वह पढ़लिखकर आत्मनिर्भर

---

१. डॉ. हेमेन्द्र पानेरी : "स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास : मूल्य संक्रमण" - पृ.क्र.७४

हो गयी। आज उसकी आर्थिक स्थिति में परिवर्तन आ गया है फिर भी पुरूष प्रधान समाज-व्यवस्था के कारण नारी समस्या जटिल बनती गयी। प्रेमचन्द युगीन उपन्यासों में नारी की सामाजिक एवं पारिवारिक समस्याओं का चित्रण हुआ है। प्रेमचन्दोत्तर युग में फ्रायड़, एडलर, युंग आदि मनोविश्लेषणवादियों के प्रभाव से नारी की मनोवैज्ञानिक गुत्थियाँ मुख्य समस्या बन गयी। अतः आज के उपन्यासकारों ने इसी समस्या के प्रति सजग होकर नारी की सामाजिक स्थिति और मानसिकता और स्त्री-पुरूष के आकर्षण-विकर्षण अर्थात कामभाव की समस्या को बड़ी गहराई से चित्रित किया है।

डॉ. देवेश ठाकुर ने "अन्ततः" उपन्यास में आधुनिक शिक्षित नारी की विवशता एवं असहाय्यता का चित्रण किया है। उपन्यास की नायिका वसुधा मध्यवर्गीय शिक्षित नारी है जो अपने स्वतंत्र अस्तित्व एवं व्यक्तित्व के लिए संघर्षरत, अनेक भीतरी-बाहरी समस्याओं से जूझती हुई दिखाई देती है। वसुधा अपनी मर्जी से उच्चवर्गीय अतुल से प्रेमविवाह करती है लेकिन उसमें असफल होती है। ऐश्वर्यसंपन्न अतुल के लिए वसुधा दिनभर की व्यस्तता के बाद सिर्फ बेडरूम की सज्जा बनकर रह जाती है और फिर उसके मेहमानों और पार्टियों में दिखावट की वस्तु, जिसका जब चाहे उपभोग करें। ऐसे अपमानित जीवन की वसुधा ने कल्पना भी नहीं की थी उसने तो सिर्फ अतुल का प्यार चाहा था। वह दुःखी हो जाती है। अतुल के पास उसकी भावनाओं को समझने के लिए न तो समय है और न उसके प्रति प्रेम है। वसुधा इसतरह के विरक्त जीवन से ऊब जाती है। उसके भीतर अपने न होने की प्रतिक्रिया पनपती है। वसुधा आजकी शिक्षित नारी है जिसमें आत्मसम्मान की भावना जाग्रत हुयी है। अपनी स्वतंत्र अस्मिता एवं सम्मान के लिए संघर्ष करना वह जानती है। वसुधा अतुल से कहती है - "मैं संघर्ष से नहीं डरती, मैंने बहुत संघर्ष किया है अतुल। संघर्ष तो मेरी रग-रग में बसा है।"[१] इसतरह पति की व्यस्तता से क्षुब्ध होकर वसुधा उसका घर छोड़ "वर्किंग वीमन्स हॉस्टल" में रहती है, जहाँ उसका जीवन और भी संघर्षमय बनता है। वह अपने आप को अकेली और असहाय्य महसूस करती है। जाते-जाते अतुल उसपर

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.क्र. ६७

एक बच्चे की जिम्मेदारी छोड़ जाता है। उसके भविष्य और उसकी जिम्मेदारी की बात सोचकर वसुधा का असहायपन और अधिक बढ़ता है। आखिर पति-पत्नी के रिश्ते में भोगना तो नारी को ही पड़ता है। क्योंकि इस पुरूष-प्रधान समाज में आधार और सुरक्षा के अभाव में अकेली औरत जी नहीं सकती, भले ही वह आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो पुरूष का सहारा उसके लिए अनिवार्य बन जाता है। यही अनिवार्यता वसुधा को सही पुरूष की तलाश में भटकाती फिरती है और पुरूष की शर्तोंपर जीने को बाध्य करती है। एक ओर वह अपने निपट एकाकीपन और पुरूष की लोलुप दृष्टि से आहत होती है तो दूसरी ओर उसे भारतीय मध्यवर्गीय परिवेश में पले-बढ़े संस्कार कोई निर्णय लेने से रोकते है। उसके मन में अपने परिवेश, संस्कार तथा भारतीय व्यवस्था के प्रति विद्रोह दिखाई देता है - "औरत, मुझ जैसी आधारहीन औरत अकेली नहीं रह सकती। यह व्यवस्था ही कुछ ऐसी है। अकेली औरत को सब दबोच लेना चाहते हैं। सब कोई, जिसे भी मौका मिल जाये। सब मौके की तलाश में रहते हैं।"[१] ऐसा ही मौका देखकर राघवन वसुधा के यौवन और धन का भरपूर फायदा उठाता है। वसुधा विवशता में ही उसका संग-साथ निभाती है। इसतरह वसुधा शिक्षित एवं आत्मनिर्भर होते हुए भी नारी होने के कारण उसे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। पुरूष-प्रधान समाज में घर बाहर की समस्या से उलझकर उसका व्यक्तित्व बिखरता जाता है।

पाश्चात्य प्रभाव से आज के नारी वर्ग में स्वच्छन्दता की भावना एवं व्यक्तिवादी जीवन दर्शन का प्रचार बढ़ता जा रहा है। व्यक्ति स्वातंत्र्य की चेतना तथा स्वच्छन्दता के कारण ही पद्मा पति के होते हुए अन्य मित्रों के साथ सम्बन्ध रखती है और विवाह-विच्छेद का कारण बनती है। पति के विरोध करने पर वह कहती है - "मैं तुम्हें बड़ा ब्रॉड माइंडेड समझती थी। लेकिन तुम भी दूसरे पुरूषों जैसे ही निकले। मेरी आजादी, मेरे मित्र, मेरे सम्पर्क तुमसे देखें-सहे नहीं जातें। है न यही बात।....तुम मुझे आजादी दोगे ? बाँदी हूँ मैं तुम्हारी ? मैं अपनी आजादी खुद ले सकती हूँ।"[२] इसतरह पद्मा अपने वैवाहिक

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.क्र.११०

२. - वही - - वही - - पृ.क्र.३५

जीवन में स्वच्छन्दता का पूर्ण उपभोग न कर सकने पर क्षोभ प्रकट करते हुए विवाह बंधन को तोड़कर विदेश चली जाती है।

शिक्षा के कारण आधुनिक नारी में अपने व्यक्तित्व की पहचान एवं दृढ़ आत्मविश्वास की भावना जाग्रत हुई है। वह पूर्ण आत्मनिष्ठ और आत्मविश्वासी है। अतः इसी दृढ़ भावनाओं के कारण ही वह अपने स्वतंत्र विचारों पर किसी का आघात सहन नहीं करती। वसुधा की सहेली शालिनी ऐसी ही नारी है जो अपने स्वतंत्र विचारों पर दृढ़ है। वह प्यार में समझौता करना नहीं चाहती। धर्म और सामाजिकता को लेकर चलनेवाले प्यार का दृढ़ता से विरोध करती है।

इसप्रकार लेखक ने वसुधा, पद्मा और शालिनी के माध्यम से आधुनिक नारी की सूक्ष्म से सूक्ष्म समस्याओं का चित्रण किया है। आज की नारी प्रगतिशील, पाश्चात्य प्रभाव से युक्त, महानगरीय सभ्यता और संस्कृति के बीच पली हुई आधुनिक समाज की प्रतिनिधि नारी है जो अपेक्षित सम्मान न मिलने पर विद्रोहिणी बन जाती है।

४.२ स्त्री-पुरूष सम्बन्ध :-

आधुनिक युग में देश की मान्यताओं में बहुत तेजी से परिवर्तन हुआ। सामाजिक परिवर्तित मूल्यों के इस युग में मानव सम्बन्धी दृष्टिकोण में भी पर्याप्त परिवर्तन आया है। मानवीय सम्बन्धों का क्षेत्र विशाल है। किन्तु यहाँ उसके एक पक्ष स्त्री-पुरूष के सम्बन्ध का ही हम विवेचन करेंगे। "नारी स्वातंत्र्य की चेतना ने मानवीय सम्बन्धों के क्षेत्र को और विस्तृत कर दिया है। स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में संबंधों को परम्परागत दृष्टि के स्थान पर नवीन चेतना की दृष्टि से व्यक्त किया गया है।"[१] पुरातन भारतीय समाज में स्त्री-पुरूष का सम्बन्ध केवल पति-पत्नी रूप में ही मान्य था, बल्कि आज के समाज में स्त्री-पुरूष के बीच स्थापित नैतिक मूल्यों में परिवर्तन आ गया है। शान्ति भारद्वाज का कहना है,

---

१. डॉ.प्रभा वर्मा : "हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप" - पृ.१२७

"पति-पत्नी के स्थापित मूल्यों में विघटन हो रहा है। लोगों ने एक साथ अनेक रूपों में जीना सीख लिया है। बाहय और आन्तरिक जीवन के बीच आज जितना फासला है उतना शायद उससे पूर्व कभी नहीं रहा।"[१]

सम्बन्धों की इस नवीनता का निरूपण अधिकांशतः शिक्षित वर्ग में हुआ है। ज्यादातर शिक्षित लोग पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण करके अनेकों के साथ अनैतिक सम्बन्ध स्थापित करते हैं। आज स्त्री और पुरूष दोनों अपने परम्परागत रूप को छोड़कर अधिकाधिक व्यक्ति होते जा रहे हैं। अस्तित्ववादी दृष्टिकोण एवं व्यक्ति स्वातन्त्र्य की भावना से पति-पत्नी के सम्बन्धों में दरारें आने लगी और पारिवारिक विघटन की समस्या बढ़ती गयी। स्त्री-पुरूष सम्बन्ध भी इसी समस्या से प्रभावित हुए है। हिन्दी के प्रगतिशील लेखक तथा समीक्षक देवेश ठाकुर ने अपने लगभग सभी उपन्यासों में स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की समस्या का चित्रण किया है।

"अन्ततः" में लेखक ने स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की जटिलता को महानगरीय परिवेश में अभिव्यक्ति देकर वैवाहिक सम्बन्धों की विडम्बना पर प्रकाश डाला है। उपन्यास की नायिका वसुधा व्यक्ति स्वातन्त्र्य तथा अस्तित्व की चेतना के कारण पति से अलग होकर अन्य पुरूषों की ओर आकर्षित होती दिखाई देती है। अतुल के साथ अपने प्रेम-प्रसंगों की यादों को मन में समेटे हुए भी स्वयं से प्रणय के प्रति अधिक जागरूक दिखती है। पुरूष के साहचर्य की यही अभिलाषा वसुधा को राघवन की छेड़छाड़ सहने के लिए विवश करती है। विवशता में ही सही वह राघवन से शारीरिक सम्बन्ध रखती है। उसके साथ घुमने तथा पिक्चर देखने जाती है। राघवन भी पत्नी कल्याणी के होते हुए मित्रता के नामपर वसुधा से सम्बन्ध रखता है।

वसुधा सुभाष की ओर भी आकर्षित होती है। उसे अपना साथी बनाने का उसका ख्वाब अधूरा ही रह जाता है। "इन्दिरा प्रेस" के संपादक पसरीचा के व्यक्तित्व और

---

१. डॉ.शान्ति भारद्वाज : "हिन्दी उपन्यास : प्रेम और जीवन" - पृ.२६४

कृतित्व से प्रभावित वसुधा सम्पर्क बढ़ने पर मन ही मन से उनकी ओर आकर्षित होती है। वह पसरीचा से कहती भी है - "मैं अपने मन में आपको अपने बहुत निकट पाती हूँ.....।"[१] पसरीचा उसके अंतर्मन को झाँककर अपनी मित्र बनने के प्रस्ताव की उसे याद दिलाते हैं। वे कहते हैं - "मन की निकटता ही मूल बात है। यही निकटता स्त्री और पुरूष के सम्बन्धों में एक बिन्दु पर आकर शरीर की निकटता में बदल जाती है। शरीर मन से अलग कहाँ है। ऐसे सम्बन्धों में शरीर तो गौण हो जाता है।.....यदि तुम्हें सामने वाले व्यक्ति पर विश्वास है। यदि तुम्हें लगता है कि वह फ्लर्ट नहीं है। तुम्हें धोखा नही देगा तो फिर जो सहज है जो होता है, उसे मान लेना चाहिए न.....।"[२] इसतरह पसरीचा शरीर की निकटता को स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की एक अनिवार्य संभावना मानते हैं। अतः शरीर और मन के इसी समीकरण से ही दोनों एक दूसरे के जीवनसाथी बनने के लिए बाध्य होते हैं क्यों कि, वसुधा को पुरूष चाहिए ही और पसरीचा को एक अच्छी पत्नी।

दूसरा उदाहरण है पसरीचा की पत्नी पद्मा का जो पति के होते हुए अन्य मित्रों के साथ सम्बन्ध रखती है। उपन्यास का और एक पात्र है सुभाष। आधुनिक खुले व्यवहारोंवाला सुभाष अनेक लडकियों से दोस्ती करता है और उनसे हर तरह की आजादी भी लेता है। "मेरी कई दोस्त है। तुमसे सुन्दर, तुमसे इन्टैलिजैंट और तुमसे अधिक खुली हुई। जिनके साथ मैं हर तरह की आजादी ले सकता हूँ। लेता रहा हूँ।"[३] सुभाष लडकियों से दोस्ती करना चाहता है लेकिन शादी करना नहीं चाहता। वह तो सिर्फ दोस्ती में विश्वास करता है। शालिनी और एन्ड्रयूज एक-दूसरे से प्यार करते हैं। एन्ड्रयूज प्यार में जब शालिनी को क्रिश्चीयन बनाने की शर्त रखता है तब शालिनी उसे ठुकराकर एक ऐसे इन्सान की तलाश करना चाहती है जो सिर्फ उसे प्यार करे।

इसप्रकार उपर्युक्त उदाहरणों से मालूम होता है कि, पाश्चात्य प्रभाव से स्त्री-पुरूष सम्बन्धों में तेजी से बदलाव आ रहा है। लेखक ने यहाँ स्त्री-पुरूष के सम्बन्ध को आधुनिक

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.क्र.१२६
२. - वही - - वही - - पृ.क्र.१२६
३. - वही - - वही - - पृ.क्र.८९

संवेदना के धरातल पर प्रस्तुत किया है। अतः स्त्री पुरूष के वैवाहिक तथा मित्रता के सम्बन्धों में बड़ी तेजी से बदलाव आ रहा है, जिससे स्त्री-पुरूष के बीच स्थापित नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है।

४.३ सेक्स समस्या :-

मानव जीवन की शाश्वत प्रवृत्ति का नाम "काम" या "सेक्स" है। "हिन्दी में पुनर्जागरण काल में आये मनोवैज्ञानिक प्रभाव के कारण "सेक्स" शब्द साहित्य में तथा समाज में काफी प्रचलित होता गया। पहले सेक्स को वासना का पर्याय मान समाज में इसे निकृष्ट तथा हीन माना जाता था। किन्तु मनोविज्ञान ने इसे मान्यता देकर मानव के सहज स्वभाव तथा प्राकृतिक इच्छा के अन्तर्गत रखा।"[१] आज वैज्ञानिक और शैक्षिक उन्नति ने मानव जीवन की अनिवार्य सहजता काम भावना को भी समाज के परम्परागत रूप से विच्छिन्न कर दिया है। पुरातन मान्यता के आधारपर काम-भाव और प्रेम-भाव को गोपनीय रखा जाता था। लेकिन अब खुलेआम इसकी चर्चा हो रही है। अतः आधुनिक उपन्यासकारों ने स्त्री-पुरूष सम्बन्धों में उदार दृष्टिकोण अपनाते हुए इसे अपनी चर्चा का विषय बनाया।

"अन्ततः" के माध्यम से उपन्यासकारने बढ़ती कामुकता तथा अश्लिलता की ओर संकेत किया है। नैतिकता के परम्परागत अर्थ में परिवर्तन आने से प्रेम और काम सम्बन्धों में व्यावहारिकता को स्वीकार किया जाने लगा है। शरीर की अपेक्षा मन की पवित्रता पर अधिक बल दिया जाने लगा है। इससे स्त्री-पुरूष के काम सम्बन्धी मान्यताओं के सन्दर्भ में उन्मुक्तता आ गई है और समाज में काम या सेक्स समस्या बढ़ रही है। उपन्यास की नायिका वसुधा और राघवन का उदाहरण दृष्टव्य है। पति से अलग होने के बाद वसुधा राघवन के साथ शारीरिक सम्बन्ध रखती है। पत्नी के होते हुए राघवन भी वसुधा के यौवन का आनंद लुटता है। वसुधा भी प्रणय के प्रति अधिक जागरूक दिखाई देती है। वह अपनी कटि और त्रिवली पर राघवन के हाथ फिराने से नहीं बिदकती। राघवन वसुधा को पिक्चर दिखाने ले जाता है जहाँ उसकी कामुकता और अश्लीलता को बढ़ावा मिलता है। वह पिक्चर

---

१. डॉ. किरण बाला आरोडा : "साठोत्तर हिन्दी उपन्यासों में नारी" - पृ.२५९

देखते हुए वसुधा को अपने कन्धों के पास झुकाता है और उसकी पीठ सहलाता है। "उसकी अँगुलियाँ वसुधा के बालों से उलझी है। वसुधा जड़ है। अब जंघाएँ सहलाई जा रही है। अब कटि की त्रिवली पर राघवन का हाथ रूक गया है। अब राघवन कटि के ऊपर टटोल रहा है। वसुधा को कुछ-कुछ होने लगा है। उसकी देह में ऊष्णता भरने लगी है। उसने अपना सर राघवन के कन्धों पर लटका दिया है।"[१] इसतरह विवशता में ही सही वसुधा पुरूष की गर्म बाहों का सहारा चाहती है। इसी कारण ही वह सुभाष और पसरीचा की ओर भी आकर्षित होती हुई दिखाई देती है। वसुधा तथा पसरीचा के सम्बन्ध के बारे में डॉ.रवीन्द्रनाथ मिश्र का कहना है - "उपयोगितावाद से परिचलित वसुधा-पसरीचा समीकरण अपनी तमाम संभावनाओं के साथ नारी-पुरूष समता का जो हल पेश करता है वह सेक्स-सम्बन्धों के एकायामी मनोविज्ञान तक सीमित हो जाता है।"[२]

इसतरह लेखकने महानगर में बढ़ती कामभावना एवं अश्लीलता की समस्या को पाठकों के सामने रखा है।

४.४ <u>अन्तर्द्वन्द्व</u> :-

अपूर्ण ईच्छाओं तथा अभिलाषाओं की पूर्ति के मध्य संघर्ष की दुःखपूर्ण अवस्था को द्वन्द्व कहा जाता है। "व्यक्ति बाहय जगत् अर्थात भौतिक जगत् के प्रभाव से तो संघर्षरत हो ही उठता है, परन्तु वह अपने मस्तिष्क में उठ रही दो विरोधी भावनाओं के मन्थन से भी संघर्षरत हो उठता है, जिसे अन्तर्द्वन्द्व कहा जाता है। मानव-मन अनेक विचारों, भावनाओं तथा इच्छाओं का भाण्डार होता है, जिनमें किसी वस्तु को पाने और न पाने में विवशता की स्थिति पर छटपटाहट होती रहती है। अतः मनुष्य का मन बाहय नियन्त्रणाओं और इच्छाओं, अस्थायी संवेगों के मध्य युध्द-स्थल बना रहता है। इसी कारण मानव-जीवन मानसिक-द्वन्द्व-ग्रस्त हो जाता है।"[३]

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.क्र.-५४
२. सं.डॉ.ब्रम्हदेव मिश्र : "पांडुलिपि" - पृ.क्र.-२१४
३. डॉ.मंजुला गुप्ता : "हिन्दी उपन्यास : समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व" - पृ.क्र.५८

निर्णय की अनिश्चयात्मक स्थिति वसुधा और पसरीचा के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व के लिए कारणीभूत होती है। उन दोनों की निजी स्वतन्त्रता किसी-न-किसी रूप में सामाजिक मान्यताओं से आडे आती रहती है। परिणामस्वरूप दोनों के मन-मस्तिष्क में विफलता से अन्तर्द्वन्द्व पनपने लगता है। कुछ हदतक उनका द्वन्द्व सामाजिक रूढ़ी परम्पराओं तथा संस्कारों में जड़ जमाए है। दोनों वैवाहिक जीवन में उत्पन्न अतृप्ति की भावना से अन्तर्द्वन्द्व में जीते हैं।

अतुल से सम्बन्ध-विच्छेद कर पसरीचा का सहारा बनने तक का वसुधा का जो मानसिक द्वन्द्व है वह बड़ी सूक्ष्मता से लेखक ने उभारा है। सुभाष और पसरीचा को लेकर वसुधा के मन में अकथनीय द्वन्द्व छिड़ जाता है, जो उसे प्रतिक्षण बेचैन करता है। एक ओर वसुधा पसरीचा की कर्तव्यनिष्ठा एवं चिन्तन से प्रभावित है तो दूसरी ओर खुले व्यवहारवाले सुभाष के व्यक्तित्व से आकर्षित है। वह पसरीचा और सुभाष के बीच चयन के द्वन्द्व में रहती है। इसप्रकार की अनिश्चयात्मक स्थिति का कारण, एक ओर उसकी दृष्टि में दोनों की समान उपयोगिता है तो दूसरी ओर उसमें स्थित आत्मबल, आत्मविश्वास और दृढ़ शक्ति की कमी भी हो सकता है। वह पसरीचा को लेकर यह सोचती है कि समाज के "दायरों को तोड़कर क्या मिलेगा। एक प्रौढ़ व्यक्ति का साथ.....। एक वृध्द साहचर्य। वह भी कब तक जब तक पसरीचा चाहेंगे। एक सम्बन्ध। जिसकी कोई सामाजिक स्वीकृति नहीं होगी। जिसको कोई,कोई मान्यता नहीं देगा.....।"[१] इसीतरह वसुधा किसी एक को स्वीकारने या किसी एक के प्रति क्षति उठाने के लिए अपने आपको तैयार नहीं पाती और लगातार अन्तर्द्वन्द्व में पिसती जाती है।

प्रेमविवाह की असफलता के कारण पसरीचा भी वसुधा की तरह द्वन्द्वरत जीवन जीते हैं। सुविधाओं से संपन्न होते हुए भी उनके मन में अकेलेपन का अहसास हमेशा बना रहता है। "सारी सुविधाओं के बीच भी भीतर तक बैठी हुई अभाव की कसक। बीस सालों से जमा होता हुआ अभाव। पहले एक दम बौखलाहट होती थी। अब बौखलाहट नहीं होती। बस एक चुभन, एक कसक होती है। चुभन का कोई बिन्दु नहीं है। नहीं, बिन्दु है। पूरा अस्तित्व ही बिन्दु बन गया है। और उसके साथ मुसीबत यह है कि इसे

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.९५

छिपाकर जीना पड़ता है। सामाजिकता। उपलब्ध सामाजिक सम्मान के योग्य बने रहने, दिखने का दिखावा। कैसी मुसीबत है।"[१]

इसप्रकार व्यक्तिगत स्वतंत्रता, काम-अतृप्ति, प्रेम-विफलता और सामाजिक बन्धनों में दोनों ही अन्तर्द्वन्द्व से पीड़ित हो गये हैं। दोनों अन्दर ही अन्दर घुलते रहते हैं और बड़ी देर के बाद आत्मीय भाव से एक निश्चयपर पहुँचते हैं। लेखक ने इसका बड़ी सूक्ष्मता से चित्रण किया है। अतः जिनके पास प्रबल इच्छाशक्ति तथा आत्मबल होता है, वे पात्र अन्तर्द्वन्द्व से ग्रस्त नहीं होते। शालिनी के चरित्र के माध्यम से हम यह जान जाते हैं। जो अपने विचारों पर दृढ़ है।

४.५ असफल प्रेमविवाह :-

मानव मन विविध भावों का कोश है। प्रेमभाव इसमें प्रमुख है जिसके आधारपर यह संसार स्थित है। समस्त सांसारिक सम्बन्ध इसी प्रेम के बलपर विद्यमान है, इसके अभाव में सभी मानवीय सम्बन्ध कोरे है। श्रध्दा, सेवा, त्याग, दया-क्षमा, वात्सल्य, सहृदयता आदि प्रवृत्तियों के मधुर मिश्रण को ही प्रेम कहा जाता है। बचपन में उस आकांक्षा की पूर्ति माता-पिता तथा भाई-बहन के बीच होती है। यौवन में यही आकांक्षा किसी को समर्पित कर उसे अपना बनाकर दोनों के बीच अद्वैत भाव प्रत्यक्ष करने में तृप्त होती है। स्त्री और पुरूष के इसी पारस्पारिक स्नेह तथा समर्पण की आकांक्षा को प्रेम कहा जाता है। अज्ञेय जीने प्रेम के बारे में कहा हैं - 'वासना नश्वर है प्रेम अमर है।'

विश्वसाहित्य में, मानव हृदय की इस प्रमुख भावना को अन्य भावनाओं की अपेक्षा सर्वाधिक महत्व प्राप्त हुआ है। युग परिवर्तन के साथ प्रेम के स्वरूपों में भी परिवर्तन आ गया है। भक्तिकाल में जो प्रेम लौकिक धरातल से ऊपर था, रीतिकाल में वही प्रेम

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२१

लौकिक धरातल पर उतर आया। आधुनिक काल में पाश्चात्य विचारधाराओं के कारण इसी प्रेम की मनोवैज्ञानिक व्याख्या की गई और प्रेम को लगभग वासनामय बना दिया गया। प्रेम का क्षेत्र निहीत स्वार्थ एवं दैहिक सीमाओं में ही आबध्द होकर रह गया और आज के जमाने में प्रेम भी एक समस्या बन गयी। आज महानगर में आदर्श प्रेम के स्थानपर ज्यादातर नकली प्रेम ही होता है जिसमें समर्पण भाव की उपेक्षा होती रही है। स्त्री-पुरूष कुछ पाने के लिए ही एक-दूसरे से प्रेम करते हैं और शादी करते हैं लेकिन अपेक्षा की पूर्ति न होनेपर अपने साथी को मंझधार में छोडकर चले जाते हैं। व्यक्ति के इसी कुण्ठित भाव को देवेश ठाकुर ने "अन्ततः" में प्रस्तुत किया है।

परस्पर आकर्षण से वसुधा और अतुल एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं। यही आकर्षण प्रेम में बदल जाता है तो दोनों घुमने-फिरने जाते हैं, घंटोंतक समुद्र के किनारे बाते करते बैठते हैं। एक दिन अतुल वसुधा से कहता है - "सच वसुधा, कोई मुझे संभालने वाला मिल जाये....तो मैं दुनिया के सारे सुखों और सारी सम्पन्नता को निचोड़ कर डाल दूँ.....।"[१] वसुधा का हाथ पकडकर आगे वह कहता है, "मेरी जिम्मेदारी ले सकोगी वसुधा? वसुधा के लिए पुरूष का यह पहला स्पर्श था। वसुधा पूरी-की-पूरी झनझना उठी थी। उससे कुछ बोलते नहीं बना था।"[२] और तब से वसुधा विचलीत हो उठी थी। अतुलका गरिमामय दृढ़ व्यक्तित्व, उसकी सम्पन्नता, उसका बाँकापन और उसके खुले इजहार देखकर वसुधा की कल्पना के पंख फैल गए थे। "उसका मन अतुल की गोद में समा जाने को करता था। लेकिन उसके संस्कार उसे टोकते थे। वह चाहती थी कि अतुल उसे अपने में समा ले। अतुल पहल करे.....। वह "ना" नहीं करेगी। वह "ना" कर भी नहीं सकती थी। लेकिन उसकी बुध्दि उसे संकोच और द्वन्द्व में डाल देती थी। उसका एकांत हिसाब लगाने में बीत जाता। अपनी और अतुल की तुलना में वह सारी रात गंवा देती।"[३] क्यों कि अतुल उच्चवर्गीय संपन्न युवक है और वसुधा एक सामान्य मध्यवर्गीय क्लर्क पिता की बेटी है जिसके संस्कार तथा परिवेश वसुधा के निर्णय की आडे आते है। इसीतरह के

---

१. डॉ. देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.क्र.६३
२. - वही - - वही - - पृ.क्र.६३
३. - वही - - वही - - पृ.क्र.६४

द्वन्द्व में कुछ दिन बीत जाने पर वसुधा माता-पिता के बंधन को तोड़कर अतुल से विवाह करती है।

वास्तव में विवाह एक पवित्र गठबंधन है जो समाज को स्थिर बनाने के लिए संगठित रखने के लिए तथा मानववंश को अबाधित रखने के लिए आवश्यक है। लेकिन आज इसी पवित्र बंधन में भी समर्पण के अभाव के कारण अनेक समस्याएँ खड़ी हो गयी है। वसुधा अतुल को बहुत चाहती थी इसलिए वह उससे प्रेमविवाह करती है लेकिन वसुधा को चाहनेवाला अतुल "पति होते ही स्वामी बन गया। कठोर, निरंकुश और उध्दत।"[१] मसुरी में हनीमून मनाकर दोनों जब बम्बई लौटते हैं तो अतुल विवाह पूर्व की कसमों को भूलकर अपने व्यवसाय में इतना व्यस्त हो जाता है कि, गर्भवती पत्नी की पुछताछ करने के लिए भी उसके पास समय नहीं होता। उसका सारा समय सरकारी दफ्तर, होटल और नाइट क्लब में ही व्यतीत होता है। वसुधा खाली रह जाती है। परिणामस्वरूप दोनों के बीच दरार आने लगती है। अतुल आए दिन देर रात को घर लौटता है या घर में पार्टियाँ होती है और वसुधा इन पार्टियों में नुमाइश की वस्तु बनकर या मेहमाननवाजी का साधन बनकर रह जाती है। वसुधा को पहले तो यह सब अच्छा लगता था लेकिन कुछ दिनों बाद इसतरह के अपमानित जीवन से वह ऊब जाती है। वह अपने को कोसती रहती है "क्यों उसने इतना बड़ा सपना देखा.....। अब अपने सपने की असलियत उसके सामने पूरी भयावहता के साथ मुँह बाए खड़ी रहती। लेकिन वह विवश थी।"[२] अतुल से शिकायत करने का उसमें साहस नहीं है लेकिन जब महरी की उपस्थिति में अतुल पूरे होशोहवास में उसपर हाथ उठाता है तब वसुधा अपमान के आवेश में अतुल से कहती है, "या तो तुम अपना रवैया बदलो या मुझे मुक्त कर दो।"[३] तब उल्टा अतुल ही अपनी संपन्नता और सुविधाओं के प्रति इशारा करते हुए कहता है कि, "सुविधा तुम्हें रास नहीं आती।"[४] वह कहता है कि, इसका कारण है वसुधा का मध्यवर्गीय पिछड़ा हुआ परिवेश। आखिर वसुधा ने एक पुरूष की निष्ठा को उसके प्यार को चाहा था उसके ऐश्वर्य को नहीं। वह अतुल

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.क्र.५९
२. - वही - - वही - - पृ.क्र.६५
३. - वही - - वही - - पृ.क्र.६६
४. - वही - - वही - - पृ.क्र.६७

को जवाब देती है, - "यह सुविधा नहीं, जड़ता है। यहाँ मेरी आत्मा घुटती है....। पूरे दिन पूरी रात का यह अंतहीन अकेलापन और खालीपन .....। यह सजावट का सामान बनी हुई मैं.....। इतनी उपेक्षा,इतना अपमान.....। आखिर मैं भी इन्सान हूँ.....। तुम्हारे बच्चे की माँ बननेवाली हूँ मैं। तुमने एक दिन भी उसके बारे में कोई बात की कभी सोचा तुमने, ऐसी हालत में मैं अपने दिन कैसे बिताती होऊँगी.....?"[१] लेकिन अतुल के मन में अपने होनेवाले बच्चे के प्रति न ममता है और न ही पत्नी के प्रति प्रेम। वह, "बच्चा तुम्हारी कोख में है। उसे तुम जनोगी। मैं क्या सोचूँ ?"[२] कहता हुआ वसुधा को अकेला छोड़कर विदेश चला जाता है वहाँ से लौटकर भी नहीं आता। वसुधा अतुल का घर छोड़कर "वर्किंग वीमन्स हॉस्टल" में रहती है। जहाँ से उसका जीवन संघर्षमय बन जाता है। इसतरह वसुधा और अतुल का प्रेमविवाह असफल होता है।

दूसरा उदाहरण है पंकज पसरीचा और पद्मा के प्रेमविवाह का। पसरीचा केन्द्रिय विश्वविद्यालय में ओ़ीजी के लेक्चरर थे। पसरीचा एम.ए.में पढ़नेवाली अपनी ही एक छात्रा पद्मा से प्यार करते हैं। उसके सौन्दर्यपर मुग्ध होकर उससे शादी करते हैं। स्वच्छन्द व्यवहारोंवाली पद्मा शादी के कुछ ही दिन बाद पसरीचा के गले की फाँस बनती है। वह पसरीचा के धन और प्यार का भरपूर फायदा उठाती है। घर में पत्नी बनकर रहने के अलावा सारा समय अपने मित्र तथा पार्टियों में ही बीताती है। सबेरे घर से निकलती है और आधी रात नशे में लड़खड़ाती हुई लौटती है। उसे न घर की चिंता है और न ही पति की। पसरीचा पद्मा के जिस सौंदर्य को चाहते थे वही उनके लिए कीचड़ बन जाता है। "ऐसा कीचड़, जिसमें कमल नहीं खिलते कीड़े रेंगते हैं। जिसको एक दिन उन्होंने अपने मन-प्राणों से भी ज्यादा चाहा था, उसे ही वे अपने गले की फाँस महसूस करने लगे थे।"[३] पद्मा के स्वच्छन्द स्वभाव के कारण दोनों में अनबन होती है और पद्मा पसरीचा को छोड़कर कनाडा चली जाती है। इसतरह पसरीचा के जीवन में "पद्मा आँधी बनकर आई थी और सैलाब बनकर चली गयी।"[४] अतः पद्मा और पसरीचा का प्रेमविवाह असफल होता है।

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.६७
२. - वही - - वही - - पृ.६७
३. - वही - - वही - - पृ.३६
४. - वही - - वही - - पृ.३४

इसप्रकार लेखकने "अन्ततः" के माध्यम से प्रेमविवाह की समस्या को हमारे सामने प्रस्तुत किया है जो सामाजिक विघटन का कारण बन गयी है।

वसुधा और पसरीचा का प्रेम विवाह समझ-बुझ के साथ सही साथ निभानेका बंधन - सफल प्रेम विवाह की ओर संकेत करता है।

४.६ <u>अन्तर्जातीय विवाह की समस्या</u> :-

सरकार द्वारा अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन दिया जाता है फिर भी ऐसे विवाहों को समाज अभी भी सहजता से स्वीकार नहीं करता। अतः ऐसे विवाह अधिकांशतः प्रेमविवाह ही होते हैं। प्रेमी युगल जाति या धर्म की रूकावटों को अनदेखा कर प्रेम करते हैं। आगे चलकर यही प्रेमी जब विवाह करना चाहते हैं तब समस्या खड़ी होती है। धर्म या जाति की संकीर्णता के कारण यह सम्बन्ध टूट जाते हैं या उनमें कटुता आ जाती है। माता-पिता भी अन्तर्जातीय विवाह को मान्यता देने के लिए झिझकते हैं परम्परागत लकीरों को तोड़ना उनके लिए असंभव-सा हो जाता है।

उपन्यासकारने "अन्ततः" में शालिनी-एन्ड्रयूज के माध्यम से इसी समस्या पर प्रकाश डाला है। शालिनी और एन्ड्रयूज एक दूसरे से बहुत प्यार करते हैं और शादी करना चाहते हैं लेकिन, एन्ड्रयूज के माँ-बाप चाहते हैं कि, पहले शालिनी को क्रिश्चियन बनना पड़ेगा फिर शादी होगी। एन्ड्रयूज का भी कहना है कि, माँ-बाप का मन रखने के लिए शालिनी को यह बात माननी पडेगी। शालिनी को यह शर्त मंजुर नहीं है। वह कहती है, -"मैंने इन्सान से प्यार किया है, किसी क्रिश्चियन से नहीं। क्रिश्चियन बनने के लिए नहीं। मैं तो उस इन्सान से प्यार करती रही जो इन्सान था। और अगर वह यह चाहे कि मैं ईसाई और ईसाइयत से भी प्यार करूँ तो यह तो मुझसे होने से रहा।"[१] इसीतरह वह सच्चे प्यार के लिए माँ-बाप के बंधनों को तोड़कर दुनिया से टक्कर लेने को तैय्यार है लेकिन प्यार या रिश्ते के बीच कोई शर्त आती है तो उसे तोड़ देना चाहती है। उसके अनुसार प्यार

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.क्र.१४४

एक विश्वास है समझौता नहीं। वह कहती है, "प्यार की कोई जाति नहीं होती वसुधा। कोई धर्म नहीं होता बस दो प्राण एक दूसरे को चाहते हैं, एक दूसरे की कद्र करते हैं। एक-दूसरे के सुख-दुःख का ध्यान रखते हैं। एक-दूसरे के प्रति उनमें विश्वास हैं। वे दोनों एक-दूसरे में जज्ब हो जाते हैं- यही प्यार है। सामाजिकता को लेकर चलनेवाला प्यार-प्यार नहीं होता। समझौता होता है....और समझौते मैंने कभी किये नहीं।"[१] इसप्रकार शालिनी जब शादी में जाति या धर्म को लेकर प्रश्न उठता है तब वह ऐसी शादी या प्यार को तोड़ना पसंद करती है।

इसप्रकार उपन्यासकार शालिनी के चरित्र द्वारा अन्तर्जातीय विवाह जैसे क्रान्तिकारी परिवर्तन की ओर अपने पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहता है. जिसकी आज के समाज में शुरूआत हो चुकी है।

४.७ <u>संस्कृति एवं परिवेश के प्रति विद्रोह</u> :-

बदलती परिस्थितियों के प्रभाव से परम्परागत नारी प्रगतिशीलता की मंझिल पार करके विद्रोही रूप में दिखाई देने लगी है। उसका यह विद्रोह परम्परागत रूढ़ी, मान्यताओं और विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों के प्रति है। आज की शिक्षित नारी अपने व्यक्तित्व के आधारपर खोखली मान्यताओं का विरोध कर रही है।

"अन्ततः" की वसुधा और शालिनी प्रेम के मार्ग में आड़े आनेवाला समाज तथा परम्परागत मान्यताओं को तोड़ देती है। अपने संस्कार तथा परिवेश से विद्रोह करनेवाली वसुधा कहती है, "संस्कार और परिवेश ही ऐसा रहा है मेरा, जहाँ कभी मैंने अपने लिये कोई निर्णय नहीं लिया। दूसरे निर्णय सुनाते रहे और मैं उन निर्णयों के इशारे पर चलती रही।"[२] वह माता-पिता का बंधन तोड़कर अतुल से प्रेमविवाह करती है और उसमें जब असफल होती है तो अन्य पुरूषों की ओर आकर्षित होती है। उसके मन में समाज का भय होते हुए भी वह सामाजिक दायरें को तोड़ने का साहस करती है और अंत में पसरीचा

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१४५
२. - वही - - वही - - पृ.१११

के साथ रहने का निर्णय लेती है। उसका यह निर्णय परम्परा से हटकर क्यों न हो उसमें उसका सुख नीहित है। आखिर आदमी को अपनी जरूरतों को सामने रखकर ही निर्णय लेना पड़ता है चाहे वह संस्कारों से हटकर ही क्यों न हो। लेखक पसरीचा के माध्यम से इन्हीं विचारों का समर्थन करते हैं,"अपनी जिन्दगी और अपना परिवेश, समझ आने के बाद, व्यक्ति को खुद बनाना पड़ता है? रास्ते में रोढों की तरह आनेवाले संस्कारों को हटाना पड़ता है और उनकी जगह नयी मान्यताओं को देनी पडती है।"[१]

प्रेम में आड़े आनेवाली सामाजिकता का विरोध करनेवाली शालिनी एन्ड्यूज नामक क्रिश्चियन युवक से प्यार करती है और शादी करना चाहती है। लेकिन शादी में उसके क्रिश्चियन बनने की शर्त आड़े आती है तब वह अपने प्रेमी को ही ठुकरा देना पसंद करती है। वह कहती है,"फिर कोशिश करूँगी किसी ऐसे इन्सान को पाने की जो मुझे प्यार करता हो, जिसे मैं प्यार करती होऊँ। जो प्यार के बीच सामाजिक रिश्ते, बँधन और शर्तों को न लाए। जो मन से प्यार करें और मन का प्यार ले। प्यार में कोई हिसाब-किताब न करे।"[२] इसतरह वह सच्चे प्यार के लिए दुनिया से टक्कर लेने को भी तैय्यार है।

इसप्रकार लेखक जाति, धर्म की खोखली मान्यताओं का यथार्थ चित्रण करते हैं। आधुनिक सुशिक्षित नारी ने उन सामाजिक रूढ़ियों एवं मूल्यों को अस्वीकार किया है जो उसकी प्रगति में बाधक रहे हैं।

४.८ होटल-क्लब संस्कृति :-

आज महानगरों में बढ़ती आबादी के कारण क्लब तथा होटलों की संख्या भी बढ़ रही है। यांत्रिकीकरण से मशीन बना आदमी थोडे से सुख-चैन के लिए इन्हीं क्लब और होटलों की ओर जाता है। बड़े-बड़े होटल, क्लब, रेस्तराँ, कॉफी हाऊसेज और बीयर बार आदि महानगरीय जीवन का अंग बन चुके हैं। युवा पीढ़ी का ज्यादातर समय इन्हीं होटलों

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१२९

२. - वही - - वही - - पृ.१४५

और क्लबों में ही जाता है। देशी-विदेशी संगीत का आस्वादन करते हुए काफी स्वतंत्रता के साथ उन्हें मुक्त व्यवहार की सुविधा प्राप्त होती है। खाना-पिना, शराब और स्त्री आदि उपभोग यहाँ पाया जाता है। यहाँ सभी स्तर के लोग आते हैं और अपनी अपनी हैसियत के अनुसार पैसा खर्च करते हैं। महानगर में जहाँ एक ओर गगन-चुंबी फाइवस्टार होटलों का निर्माण हुआ है तो दूसरी ओर छोटे-मोटे रेस्तराँओं से महानगर का कोना-कोना व्याप्त है। अतः होटल, क्लब, रेस्तराँ आदि महानगर का अभिन्न हिस्सा बन चुके हैं।

महानगर की इसी होटल-क्लब संस्कृति का देवेश ठाकुर के उपन्यासों में यथार्थ चित्रण मिलता है। "अन्ततः" का क्षेत्र बम्बई महानगर है, जहाँ पाश्चात्य प्रभाव के कारण यह संस्कृति तेजी से पनप रही है। यहाँ घर के बाद दूसरा स्थान होटल, क्लब और रेस्तराँ को मिलता है। घर में जो नहीं मिल सकता वह सब कुछ इन होटलों और क्लबों में मिल जाता है। "अन्ततः" के सभी पात्र अपना खाली समय प्रेस क्लब, लेम्प एण्ड लाइट रेस्ट्राँ, पूरोहित रेस्ट्राँ, ला-बेला रेस्ट्राँ, होटल दोम्बेली, होटल ताज, स्वदेशी, मेघराज आदि में बीताते दिखाई देते है। यहाँ आने का हर एक का अलग अलग कारण है। कोई मित्र के साथ आता है तो कोई प्रेमी के साथ। वसुधा, पसरीचा, अतुल अपने खालीपन से छुटकारा पाने के लिए होटल क्लब में चले जाते हैं। अतुल का कहना है, "होटल और रेस्ट्राँ उन्हीं लोगों से बसते हैं जो अपनी जिन्दगी में अकेले होते हैं।"[१] अपनी जिन्दगी से उदास मायूस आदमी, अपने दर्द को भूलाने के लिए यहाँ आता है। अतुल सुविधासंपन्न होते हुए भी अपने अकेलेपन के कारण दुःखी है इसी दुःख को भूलने के लिए वह होटल, क्लब का सहारा लेता है, -"ये होटल, रेस्ट्राँ, क्लब यह भटकन सब अपने गमों को भूलने के लिए ही तो है वसुधा। मन की बिलबिलाहट है यह।"[२]

इसप्रकार उपन्यास के सभी पात्रों के बीच जो भी बातचीत हुई है वह या तो होटल में या रेस्ट्राँ में हुई दिखाई देती है। इससे हम जान जाते हैं कि, लेखक महानगरीय

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.६१

२. - वही - - वही - - पृ.६२

जीवन के प्रति कितने सतर्क हैं। उन्होंने पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से विकास पानेवाली महानगरीय होटल-क्लब संस्कृति का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।

४.९ <u>जीवन मूल्यों का विघटन</u> :-

सामाजिक परिवर्तन के साथ साथ परम्परागत स्थायी मूल्यों में भी परिवर्तन आ रहा है। इसी निरन्तर परिवर्तनशीलता के कारण समाज में मूल्य विघटन की समस्या बढ़ गयी है। "समाज व्यक्ति और समुह के सम्बन्धों का संगठन है। ये सम्बन्ध परस्पर संतुलन पर आधारित होते हैं। असंतुलित होने पर समाज में मूल्य विघटन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।"[१] जो आधुनिक उपन्यासों का विषय बन गयी है।

आज मानवीय सम्बन्धों में जो विघटन की स्थिति उत्पन्न हो गयी है उसका यथार्थ चित्रण डॉ.देवेश ठाकुर के उपन्यासों में मिलता है। आधुनिक चिन्तन और वैज्ञानिक जीवन दृष्टि ने इन सम्बन्धों में दरार उत्पन्न कर दी है। "सम्बन्धों का आधार अब मानवीय भावना न होकर स्वार्थ अर्थात आर्थिक धरातल रह गया है। पति-पत्नी, माँ-बेटे, पिता-पुत्र सभी स्वार्थ की दृष्टि से एक दूसरे का मूल्यांकन करने लगे है। जो अधिक फलदायी होता है, उसके प्रति अधिक झुकाव रहता है। इस प्रकार सब सम्बन्धों में परम्परागत मर्यादा का अन्त एवं स्वतंन्त्रता का प्रादुर्भाव हो चुका है।"[२] अतः आज के युग में सम्बन्धों में कहीं भी पहले जैसा स्थायित्व नहीं रह गया है। भौतिकवाद के कारण अनिश्चय की स्थिति में आपसी सम्बन्ध शिथिल होने लगे हैं।

"अन्ततः" की वसुधा पति की व्यस्तता से क्षुब्ध होकर समर्पण के अभाव में पारिवारिक विघटन का कारण बनती है। वह अपनी स्वतंत्र अस्मिता एवं अस्तित्व की भावना से पति का घर छोडती है। अतुल भी गर्भवती वसुधा को छोड़कर विदेश चला जाता है। इन दोनों के दाम्पत्य जीवन की एक निशानी है उनका बेटा अविनाश जिसे माँबाप के

---

१. डॉ. प्रभा वर्मा : "हिन्दी उपन्यास : सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप" - पृ.३२

२. डॉ. हेमेन्द्र पानेरी : "हिन्दी उपन्यास : मूल्य संक्रमण" - पृ.१९७

होते हुए विवाह-विच्छेद के कारण दूर बोर्डिंग स्कूल में रहना पडता है।

दूसरा उदाहरण है पसरीचा और पद्मा का जो एक साथ रहते हुए भी कटे-कटे से रहते हैं। खुले व्यवहारोंवाली पद्मा पति के प्रेम को हमदर्दी और भीख समझती हैं। उसे अपने पति और घर की कोई पर्वा नहीं है। पसरीचा उसकी बेफिक्री का विरोध करते हैं तो वह कहती है, "मैं अपनी आजादी खुद ले सकती हूँ। मुझे तुम्हारी हमदर्दी और भीख नहीं चाहिए।"[१] दोनों में अनबन होती है और पद्मा अपने उच्छृंखल स्वभाव के कारण पति का घर छोड़कर किसी नये प्रेमी के साथ विदेश चली जाती है।

इसप्रकार महानगरों में दाम्पत्य जीवन की एकनिष्ठता विघटित हो रही है। सहन-शीलता, समर्पण, त्याग आदि भावनाएँ लुप्त होने से सम्बन्धों में विद्रोह और संघर्ष की स्थिति प्रबल बन रही है। शिक्षित नारी अर्थिक निर्भरता के कारण पुरूष के समान स्वतन्त्रता चाहती है किन्तु पुरूष वर्ग को यह सहन न होने से पारस्पारिक मूल्य टूटने लगे है। मनोविज्ञान के क्षेत्र मे नए विचारों के परिणामस्वरूप सेक्स आदि के सम्बन्ध में भी हमारी पुरानी मर्यादाएँ टूटने लगी है। प्रस्तुत उपन्यास में वसुधा, राघवन, पद्मा इसके उदाहरण है। लेखक ने बड़ी सूक्ष्मता से इसे चित्रित किया है। अतः कहा जा सकता है कि, आज महानगरों में सम्बन्धों का कोई मूल्य नहीं रहा। सम्बन्धों में जटिलता आने से उसकी मधुरता प्रायःनष्ट हो रही है।

४.१० अकेलेपन की समस्या :-

महानगरीय व्यक्ति का जीवन कई कारणों से व्यस्त है फिर भी आज महानगरों में अकेलेपन की समस्या बढ़ती जा रही है। बढ़ती भीड़ के बीच विक्षिप्त मनोदशा में आदमी अपने आपको अकेला महसूस करता है। रामदरश मिश्र कहते हैं, "नगर महानगर का बोध,

---

१. डॉ. देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ. ३५

अपरिचय, अकेलेपन, खुदगर्जी, अनात्मियता के रेशों से बुना जाता है। निकट के सम्बन्धों में भी तनाव और टूटन की स्थितियाँ यहाँ के व्यस्त जीवन में प्रायः बनती है। भाग-दौड़, उखाड़-पछाड़ और लाग-डाँट में उलझा झुँझलाया नागरीक अनेक मुखौटे पहनने के लिए विवश होता है।"[१]

"अन्ततः" की नायिका वसुधा, अतुल तथा पसरीचा इस अकेलेपन के शिकार हुए हैं। सभी सुविधाओं के होते हुए भी पसरीचा को अकेलापन खाये जा रहा है। उनका बचपन भी अनाथों की तरह अकेले गुजर गया है और जवानी में इसी अकेलेपन को भरने के लिए पद्मा से विवाह किया है लेकिन पद्मा भी उन्हें अकेला छोड़ चली जाती है। वे अंदर-ही-अंदर टूट जाते हैं। मान, सम्मान, प्रतिष्ठा, स्वीकृति, आयोजन, गोष्ठियाँ, मीटिंगे, हवाई यात्राएँ आदि में व्यस्त होकर भी उन्हें सूना-सूना लगता है। दिनभर की व्यस्तता के बाद शाम को गेस्ट हाऊस आते हैं तब उन्हें सब कुछ नीरस लगता है। "रम की घूँट भी काम नहीं आती। सिगार का धुआँ भी नहीं। भीड़ के बीच भी अकेलेपन का अहसास। सारी सुविधाओं के बीच भी भीतर तक बैठी हुई अभाव की कसम।"[२] अपना अकेलापन काटने के लिए ही वह रम और सिगार का सहारा लेते हैं।

अतुल उच्चवर्ग का पात्र है। उसके पास गाडी, बंगला, पैसा सबकुछ होकर भी वह अकेलेपन की समस्या का शिकार हुआ है। शादी के पहले अकेलेपन के कारण ही वह अपनी जिन्दगी होटल और क्लब के माहौल में बीताता है फिर भी उसका अकेलापन दूर नहीं होता, वह कहता है, "होटल और रेस्ट्राँ उन्हीं लोगों से बसते हैं जो अपनी जिन्दगी में अकेले होते हैं।.....मैं यहाँ हूँ तो अपने अकेलेपन के कारण ही न।.....लेकिन इस सबके बीच भी यहाँ आनेवाला हर आदमी अपने को अकेला महसूस करता है।"[३]

---

१. डॉ.रामदरश मिश्र : "हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष" - पृ.११२
२. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२१
३. - वही - - वही - - पृ.६१

वसुधा, अतुल के घरमें थी तब अतुल की व्यस्तता के कारण सब सुविधाओं के बावजुद भी उसे अकेलापन कचोटने लगता है। इससे छुटकारा पाने के लिए विश्वविद्यालय में पत्रकारिता का कोर्स ज्वाइन करती है। जहाँ सहपाठी साथियों के साथ समय बीताने से उसे बड़ी राहत मिलती है। अतुल का घर छोड़कर जब वह हॉस्टल में रहती है तब उसका अकेलापन और भी बढ़ता है। वह प्रेस में पत्रकार की नौकरी करती है जहाँ का माहौल भीड़ से भरा तथा व्यस्त होते हुए भी वह अपने को अकेली महसूस करती है।

इसतरह महानगर के व्यस्त जीवन में भी इन्सान अपने अकेलेपन के कारण उदास, मायूस होकर जी रहा है। उसमें दिन-ब-दिन अलगाव और परायेपन की भावना बढ़ रही है। इन्सान की इसी विक्षिप्त मनोदशा की ओर उपन्यासकार हमारा ध्यान आकर्षित करते है जो आज के महानगरीय जीवन की प्रमुख समस्या बन गयी है।

४.११ <u>अन्धानुकरण</u> :-

योरोपीय सभ्यता का अनुकरण करने की प्रवृत्ति के कारण ही दिखावटीपन की समस्या उपजी है। उच्चवर्ग का अन्धानुकरण करने के प्रयास में मध्यवर्ग में दिखवटीपन की समस्या उभरी है। अपनी हैसियत से बढ़-चढ़कर रहने के प्रयास में मध्यवर्गीय मनुष्य निरन्तर निराश होता जा रहा है। आर्थिक क्षमता न होते हुए भी उच्च वर्गीय सभ्यता को अपनाया जाता है। उपन्यासकारने प्रस्तुत उपन्यास में खोखले दिखावटीपन का भी चित्रण किया है। मध्यवर्गीय पसरीचा की पत्नी पद्मा का रहन-सहन उच्चवर्गीय औरतों जैसा है। अध्यापक पसरीचा की महीने की पूरी तनख्वाह तो पद्मा की ऊँची साडियाँ, ब्यूटिशियन का बील, उसके मित्र तथा उसकी किटी पार्टियाँ आदि में ही खतम होती है। पद्मा के पास आधा दर्जन घडियाँ होते हुए भी वह और एक घड़ी खरीद लाती है और पति से कहती है, "बस तीन हजार की.....। इन्डिया में मुश्किल से ८-१० लोगों के पास होगी अभी।"[१] लेकिन इस घड़ी की किमत जुटाना पसरीचा के लिए मुश्कील होता है। तब पद्मा रूठ जाती है और उस रात खाना भी नहीं खाती। अन्त में पसरीचा को ही उसके आगे हार माननी पड़ती है।

वे अपने मित्र से पैसे लेकर पद्मा के हाथ में थमा देते हैं। इसतरह पद्मा का दिखावटी रहन-सहन, उसकी बढ़िया आदतें मध्यवर्गीय पसरीचा की हैसियत से बढ़कर है।

४.१२ अर्थ समस्या :-

प्रत्येक युग का सामाजिक राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जीवन आर्थिक मूल्यों से प्रभावित रहा है, इसीकारण ही जीवन में सबसे महत्वपूर्ण स्थान अर्थ को दिया जाता है। आर्थिक मूल्योंपर ही समाज का विकास निर्भर है। सामाजिक परिपार्श्व में विभिन्न विषमताओं का कारण अर्थ ही है जो आधुनिक युग की सबसे बिकट समस्या है। आर्थिक अभाव के कारण अनेक सामाजिक समस्याओं का जन्म होता है। डॉ.कमल गुप्ता के अनुसार, "समाज में व्यापक भ्रष्टाचार, चोरी, हिंसा, कालाबाजारी, तस्करी तथा अनेक जघन्य अपराधों के पीछे अधिक से अधिक मुद्रा प्राप्त करने की लोलुप प्रवृत्ति ही विद्यमान है।"[१]

डॉ.देवेश ठाकुर ने समाज जीवन और व्यक्ति जीवन में बढ़ती हुई अर्थ की प्रभुता, अर्थ लिप्सा आदि का सजीव चित्रण किया है। आधुनिक सभ्यता में पैसा एक अभिशाप बनकर आया है। जिसके सामने सबकुछ बिकता है। उपन्यासकार ने राघवन के माध्यम से अर्थ लोलुपता का चित्रण किया है। राघवन अर्थ प्राप्ति के लिए अपना स्वत्व बेचनेवाला भ्रष्ट चरित्र है। वह वसुधा की कमजोरी का फायदा उठाकर उसके धन और यौवन का आनंद लेता है। आर्थिक लाभ के लिए राघवन की पत्नी भी अपने पति का साथ देती है। "वस्तुतः आज के युग में अर्थ इतना प्रधान हो गया है कि व्यक्तिगत नैतिक कमजोरियों को हम गौण समझने लगे हैं।"[२] धन का लोभी राघवन वसुधा के पैसों का रत्ती-रत्ती हिसाब जानता है। उसके पैसों से अपने लिए एक नया फ्लैट लेना चाहता है, इतना ही नहीं अपने पिता की बिमारी के इलाज के लिये भी वह वसुधा के पास पैसे माँगता है, "डॉक्टरों ने सर्जरी के लिये कहा है....।...लाख तो लग ही जाएगा....। तुम कुछ दे सकती हो?....पच्चीस हजार काफी होगा.....।"[३] इसप्रकार राघवन का हर व्यवहार अर्थ से जुड़ा हुआ है। हर

---

१. डॉ.आशा मेहता : "स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास में वैचारिकता" - पृ.१५२
२. स.ब्रम्हदेव मिश्र : "पांडुलिपि" - पृ.२२० (डॉ.रवीन्द्रनाथ मिश्र)
३. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.८१

मानवीय सम्बन्ध को वह पैसों के मूल्य से ही आँकता है। वसुधा की सहेली शालिनी पर होटल में खर्च किये पैसे वह वसुधा से वसूल करता है। होटल का बिल चुकाते समय वह कहता है, "दे,दो। वैसे भी तुम्हारी सहेली पर मेरा खर्च हो गया है।"[१] पिता की मृत्यू के पश्चात राघवन तथा उसका छोटा भाई नारायण में सम्पत्ति को लेकर झगड़ा शुरू होता है। पिता की सब प्रापर्टी राघवन लेना चाहता है। इसलिए वह पिताका वसीयतनामा भाई को नहीं दिखाता।

ज्यादा धन कमाने की लालसा से ही अतुल वसुधा जैसी सुंदर,सुशील पत्नी को छोड़ विदेश चला जाता है। सुभाष को एडवरटाईजिंग में ज्यादा पैसा मिलता है इसीलिए वह वहाँ काम करता है। उसका कहना है - "पैसा कितना भी ज्यादा क्यों न हो, कभी ज्यादा नहीं होता।"[२] व्यवसायी लोगों में तो हजारों लाखों की ही बातें होती है, "ही हेज् मनी। ही वांट्स टु डू समथिंग इन इंडिया। इंडिया में नाम चाहिये उसे। कनाडा में कोई पूछ नहीं है। साठ-सत्तर लाख तो लगा ही सकता है।"[३]

इसप्रकार आजकल अर्थ ही जीवन का मानदण्ड बन रहा है। आज स्त्री-पुरूष, पति-पत्नी, भाई-भाई, भाई-बहन, मित्रता जैसे सभी मानवीय सम्बन्धों में अर्थदृष्टि ने एक नया मान खड़ा कर दिया है। पैसे के सामने सारे रिश्ते नाते झुठे नजर आते हैं।

४.१३ भ्रष्टाचार :-

स्वतंत्रता के बाद राजनीतिक जीवन में घोर अनैतिकता व्याप्त हो गई है। त्याग-तपस्या, आदर्श चरित्र आदि का अभाव सर्वत्र दिखाई देता है। चारों ओर स्वार्थान्धता के कारण नेता, अफसर भ्रष्ट बने हुऐ हैं। पूरी व्यवस्था ही भ्रष्टता की सीमा पार कर गयी है। ईमानदारी के लिए कोई स्थान नहीं रह गया। नेता लोग देशभक्ति के नाम पर जनता

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.५६
२. - वही - - वही - - पृ.८६
३. - वही - - वही - - पृ.११३

को मूर्ख बना रहे है इसीलिए चारों ओर चारित्रिक पतन, नैतिक अवमूल्यन, घूसखोरी, भ्रष्टाचार, मुनाफाखोरी फैल गयी है। आज राष्ट्रीय हित के स्थानपर स्वार्थ देखा जाता है।

देवेशजी ने अपने उपन्यासों में विशाल भारत की राजनीतिक गतिविधियो का व्यापक चित्रण प्रस्तुत किया है। वास्तव में स्वतंत्र भारत में सच्चे नेताओं का अभाव हो गया है और समाजवादी लोकतंत्र खोखला शब्द बन गया। स्वार्थी नेता ही राजनीति के प्रमुख संचालक है जो भ्रष्ट व्यवस्था के जड़ में है। "अन्ततः" में लेखक विश्व हिन्दू परिषद, शिवसेना, रामजन्मभूमि-बाबरी मस्जिद, रथयात्रा आदि का उल्लेख कर पाठक को साम्प्रदायिक समस्या से सूचीत किया है, जिसके मूल में राजनीतिक नेता ही है। वे अपना राजनीतिगत स्वार्थ साधने के लिए साम्प्रदायिक विद्वेष फैला देते है। साम्प्रदायिकता आधिकांश में निहित संकीर्ण स्वार्थों की देन है।

"कोई भी नेता लड़ता कब है। बस लड़वाता है।"[१] इसतरह का व्यंग्य करके लेखक भ्रष्ट नेताओं का पर्दाफाश करते हैं। आज की प्रशासनिक और राजकीय व्यवस्था उत्तरदायित्व के अभाव में बिखर गई है। "जनवाद के पैरोकार और उनके आका अपने वक्त की समस्याओं को बीते जमाने की आँखों से देखने का स्वांग रच रहे हैं। दरअसल, कुर्सीधारी जनवादी आकाओं की यह एक महीन साजिश है। जनवादी आकाओं का यह गिरोह मंच पर तो क्रान्तिकारी दीखता है लेकिन अपने ड्राइंग रूम और बैडरूम में यह घोर ब्राम्हणवादी और प्रतिक्रियावादी है। देश को चिंतन के स्तर पर सबसे बड़ा खतरा इन्हीं प्रपंचियों से है। गरीबी बदइन्तजामी, बेहाली और बेईमानी के इस सड़े हुए माहौल में ये मिथक और सौन्दर्यशास्त्र की रसोई बनाने में मशगूल हैं। इनकी इस साजिश को पहचानने की कोशिश होनी चाहिये।"[२]

प्रजातन्त्र के नामपर विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से समाज में सुधार लाने का प्रयास किया गया, किन्तु विकास की योजनाओं का अधिकांश धन नेताओं के

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.७६

२. - वही - - वही - - पृ.११४

ही घर गया है। पूरे देश में आक्रोश और हिंसा फैल गयी है। कस्बों और गाँवों में बदहाली और बेरोजगारी बढ़ रही है। आज की युवापीढ़ी निराश एवं नशीली होकर पलायनवादी बनती जा रही है। अतः आज देश के राजनीतिक जीवन में व्याप्त अनैतिकता से विघटन की समस्या पैदा हो गई है। इस समस्या का समाधान करने के लिए विवेक-बुध्दि और शक्ति की आवश्यकता है।

४.१४ आवास की समस्या :-

आजादी के बाद औद्योगिकरण के कारण देहाती लोग शहर के प्रति आकर्षित हो गये। परिणामस्वरूप शहरों और महानगरों में आबादी बढ़ती गयी और मकान की समस्या खड़ी हो गयी। गरीब लोग फूटपाथ का सहारा लेते हैं। निम्नवर्ग के लोग जैसे-तैसे झोपडपट्टियों में रहते है। उच्चवर्ग के पास धन होता है वह जहाँ चाहे बंगला बना सकते है। मध्यवर्ग के लिए यह समस्या दिन-ब-दिन बिकट बनती जा रही है। "अन्ततः" में लेखक इसी समस्या पर प्रकाश डालते हैं। मध्यवर्गीय लोग फ्लैट खरीदने के लिए पैसे इकट्टा करने लगते हैं और जब तक पैसों का इंतजाम हो जाता है तब तक जमीन की कीमत बढ़ जाती है। राघवन वसुधा की सहाय्यता से अपने लिए एक फ्लॅट खरीदना चाहता है। उसे मालूम है कि अगर फ्लैट जल्दी नहीं खरीदा गया तो उसकी किमत बढ़ जाएगी। वह वसुधा से कहता है, "कल मुझे प्लॉट देखने जाना है। गुरूस्वामी के साथ। उसे जल्दी ही फाइनेलाइज करना है। पता है, जमीन की किमत रोज ५-१० रूपये बढ़ जाती है।"[१] इसतरह जमीन की किमत बढ़ने के भय से ही राघवन अपने लिए जल्दी से प्लॉट खरीदना चाहता है।

४.१५ जाति श्रेष्ठता की समस्या :-

स्वतंत्र भारत के शिक्षित लोगों ने जाति-प्रथा के प्रति अपना विरोध प्रकट करते हुए सुधारवादी दृष्टिकोण अपनाया लेकिन ऊपर से सुशिक्षित एवं सुधारवादी दिखनेवाले कुछ ऐसे लोग भी है, जो अपनी जाति को लेकर अपने आप को श्रेष्ठ मानते हैं। लेखक राघवन

---

१. डॉ. देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.४३

तथा कल्याणी के माध्यम से मानव मन के इस कुण्ठित भाव को चित्रित करते हैं। दोनों अपने स्वार्थ के लिए वसुधा की कमजोरी का फायदा उठाते हैं, ऊपर से यह जता देते है कि वे वसुधा के प्रति अहसान कर रहे हैं। कल्याणी वसुधा से कहती है, "हम उँची जात वाले ब्राम्हण हैं। फिर भी क्या तुम्हारे साथ कोई दुराव रखा। और तो और, अपने बर्तनों तक में तुम्हें खाना तक खिलाया। अपने हर बड़े-छोटे रिश्तेदार से तुम्हें, मिलाया....तुम्हारा मान किया, करवाया.....।"[१]

इसप्रकार लेखक सफेद पोश लोगों की मानसिकता का चित्रण करते हैं जिनमें अपनी जाति का कच्चा अभिमान है।

४.१६ निष्कर्ष :-

उपर्युक्त विवेचन से हम कह सकते हैं कि, "अन्ततः" नारी मन की भावनाओं, विवशताओं तथा उसके जीवन की विभिन्न स्थितियों आदि को चित्रित करनेवाला यह उपन्यास यथार्थ में आधुनिक नारी की जीवन गाथा को ही स्पष्ट करता है। आधुनिक शिक्षित नारी ने अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व के लिए संघर्ष आरंभ किया है। आज की आत्मनिष्ठ और आत्मविश्वासी नारी अपने स्वतंत्र विचारोंपर किसी का आधात सहन नहीं करती। अपना स्वाभिमान अथवा "स्व" की रक्षा के लिए वह माता-पिता, पति तथा समाज के बंधनों को तोड़ देती है, किन्तु शिक्षित एवं आत्मनिर्भर होते हुए भी उसे इस पुरूष प्रधान समाज में किसतरह जूझना पड़ता है, इसका यथार्थ चित्रण देवेशजी ने किया है।

लेखक ने वसुधा, पसरीचा, शालिनी आदि चरित्रों के माध्यम से मुंबई के आधुनिकतम वातावरण मे मानव संबंधों की खोज का प्रयास किया है। नवीन मानवीय सम्बन्धों के प्रयास में स्त्री-पुरूष के बीच प्रेम की समस्या उभरी है जो प्रेमविवाह तथा अन्तर्जातीय विवाह का कारण बन गयी और स्त्री-पुरूष के बीच स्थापित नैतिक मूल्यों में परिवर्तन आया। समन्वय, समर्पण और समझदारी के अभाव में पति-पत्नी सम्बन्ध टूट रहे है, जिससे स्त्री-पुरूष सम्बन्धी समस्या बढ़ गयी। लेखक ने इसी वैवाहिक सम्बन्धों की विडम्बना पर प्रकाश डाला

है। मूल्य विघटन के इस आधुनिक समाज में स्त्री-पुरूष के बदलते सम्बन्धों के कारण ही मानव जीवन की शाश्वत प्रवृत्ति कामभावना ने अश्लिलता का रूप धारण किया। परिणामस्वरूप इन्सान स्वतंत्र-चेतना, काम-अतृप्ति, प्रेम विफलता और सामाजिक बन्धनों में मानसिक द्वन्द्व से पीड़ित हो गया। वह अपने परिवेश, संस्कार तथा रूढ़ियों के प्रति विद्रोही बन गया है।

उपन्यासकार ने स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की जटिलता को महानगरीय परिवेश में पेश करते हुए महानगर की अन्य समस्याओं पर भी प्रकाश डाला है। महानगर का जीवन दिन-ब-दिन व्यस्त तथा जटिल बनता जा रहा है। महानगर की व्यस्त जिन्दगी में आदमी अकेलापन महसूस करता है। यह खालीपन भरने के लिए ये लोग बाहर अपनापन ढूँढते हैं या फिर होटल और क्लब का सहारा लेते हैं। जहाँ पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव तेजी से पनप रहा है। आज बढ़ती जनसंख्या के कारण महानगर में मकान की समस्या भी बढ़ रही है और जमीन की कीमत दिन-ब-दिन बढ़ रही है। आज के जमाने में पैसा ही सबकुछ है। इन्सान अपनी मनचाही सुविधायें जुटाने के लिए अर्थ के पीछे पड़कर भ्रष्ट बन रहा है।

स्वतंत्र भारत की प्रशासनिक एवं राजनीतिक व्यवस्था में अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार फैल गया है जिसने प्रजातंत्र का ढाँचा ही बदल दिया है। अतः लेखक के मन में आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह दिखाई देता है। उन्होंने राजनेताओं की खोखली देशभक्ति पर व्यंग्य करके उनसे निर्माण समस्याओं पर प्रकाश ड़ाला है। इसप्रकार उपन्यासकार महानगरीय समस्याओं का सूक्ष्म चित्रण हमारे सामने प्रस्तुत करने में सफल हो गये है।

-o-o-o-o-o-